IOSR Journal Of Humanities And Social Science (IOSR-JHSS)
Volume 30, Issue 1, Series 7 (January, 2025) 71-83
e-ISSN: 2279-0837, p-ISSN: 2279-0845.
www.iosrjournals.org

मैथिलीशरण गुप्त जी के भारतीय संस्कृति के आदर्शों में नारी चित्रण की साहित्यिक समीक्षा

गरिमा यादव
सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग,
नाईट एंगल कॉलेज फ़ॉर गर्ल्स, विजय नगर, अलवर , राजस्थान, 301001

शोध सार संक्षेप
मैथिलीशरण गुप्त जी के काव्य में नारी चित्रण के माध्यम से उन्होंने भारतीय संस्कृति के आदर्शों को दिखाया है। उनके काव्य में नारी को दायित्वों को निभाने वाली, त्याग करने वाली, और नवीन विचारों की अभिव्यक्ति करने वाली के रूप में दिखाया गया है। मैथिलीशरण गुप्त जी की गणना महान साहित्यविदों में की जा सकती है, जिन्होंने भारतीय जीवन को समग्र रूप से परखने का प्रयत्न किया। गुप्त जी राष्ट्रीय नवोत्थान की प्रेरणा में भारत की अतीतकालीन समृद्ध संस्कृति के बहुरंगी चित्र लेकर उपस्थित हुए हैं। इसी कारण कुछ साहित्यकारों ने उन्हें 'भारतीय समाज के अन्तर्द्रष्टा और भारतीय संस्कृति के आख्याता' के रूप में चित्रित किया है।' गुप्त जी का जीवन हिन्दू आर्य का जीवन है, अतः स्वभावतः उनके द्वारा गृहीत संस्कृति भी हिन्दू आर्य संस्कृति है। संस्कृति वह आधारशिला है जिसके आश्रय में जाति, समाज व देश का भव्य प्रसाद निर्मित होता है। यह वह समष्टि है जिसमें ज्ञान, विश्वास, कला, नैतिकता, न्याय, रीति–रिवाज तथा ऐसी सभी उपार्जित गुण हैं। जिन्हें मनुष्य एक सामाजिक प्राणी होने के नाते अर्जित करता है। अतः गुप्त जी स्वदेश की उस संस्कृति के अनन्य उपासक थे जिसमें क्षमा, त्याग, शान्ति, आतिथ्य सत्कार, नारी का आदर आदि का समावेश है अतः प्रस्तुत शोध पत्र में मैथिलीशरण गुप्त जी के भारतीय संस्कृति के आदर्शों में नारी चित्रण की साहित्यिक समीक्षा की गई है ।

मुख्य शब्द :– परिचय, कृतियाँ, महाकाव्य, खंडकाव्य, नाटक, काव्यगत विशेषताएं, नारी चित्रण की विशेषताएं, सामाजिक जीवन सम्बन्धी आदर्श, पारिवारिक जीवन सम्बन्धी आदर्श, राजनैतिक आदर्श, धार्मिक आदर्श एवं निष्कर्ष ।

परिचय :–

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त (03 अगस्त 1886 – 12 दिसम्बर 1964) हिन्दी के प्रसिद्ध कवि थे। हिन्दी साहित्य के इतिहास में वे खड़ी बोली के प्रथम महत्त्वपूर्ण कवि हैं। उन्हें साहित्य जगत में 'दद्दा' नाम से सम्बोधित किया जाता था। उनकी कृति भारत–भारती (1912) भारत के स्वतन्त्रता संग्राम के समय में काफी प्रभावशाली सिद्ध हुई थी और इसी कारण महात्मा गांधी ने उन्हें 'राष्ट्रकवि' की पदवी भी दी थी। उनकी जयन्ती 03 अगस्त को हर वर्ष 'कवि दिवस' के रूप में मनाया जाता है। सन 1954 में भारत सरकार ने उन्हें पद्मभूषण से सम्मानित किया। महावीर प्रसाद द्विवेदी जी की प्रेरणा से गुप्त जी ने खड़ी बोली को अपनी रचनाओं का माध्यम बनाया और अपनी कविता के द्वारा खड़ी बोली को एक काव्य–भाषा के रूप में निर्मित करने में अथक प्रयास किया। इस तरह ब्रजभाषा जैसी समृद्ध काव्य–भाषा को छोड़कर समय और संदर्भों के अनुकूल होने के कारण नये कवियों ने इसे ही अपनी काव्य–अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया। हिन्दी कविता के इतिहास में यह गुप्त जी का सबसे बड़ा योगदान है। घासीराम व्यास जी उनके मित्र थे। पवित्रता, नैतिकता और परंपरागत मानवीय सम्बन्धों की रक्षा गुप्त जी के काव्य के प्रथम गुण हैं, जो 'पंचवटी' से लेकर 'जयद्रथ वध', 'यशोधरा' और 'साकेत' तक में प्रतिष्ठित एवं प्रतिफलित हुए हैं। 'साकेत' उनकी रचना का सर्वोच्च शिखर है।

कृतियाँ :–

महाकाव्य– साकेत 1931, यशोधरा 1932

खण्डकाव्य– जयद्रथ वध 1910, भारत–भारती 1912, पंचवटी 1925, द्वापर 1936, सिद्धराज, नहुष, अंजलि और अर्घ्य, अजित, अर्जन और विसर्जन, काबा और कर्बला, किसान 1917, कुणाल गीत, गुरु तेग बहादुर, गुरुकुल 1929, जय भारत 1952, युद्ध, झंकार 1929 , पृथ्वीपुत्र, वक संहार, शकुंतला, विश्व वेदना, राजा प्रजा, विष्णुप्रिया, उर्मिला, लीला, प्रदक्षिणा, दिवोदास, भूमि–भाग ।

नाटक – रंग में भंग 1909, राजा–प्रजा, वन वैभव, विकट भट , विरहिणी , वैतालिक, शक्ति, सैरन्ध्री, स्वदेश संगीत, हिड़िम्बा , हिन्दू, चंद्रहास

मैथिलीशरण गुप्त ग्रन्थावली (मौलिक तथा अनूदित समग्र कृतियों का संकलन 12 खण्डों में, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली से प्रकाशित, लेखक–संपादक : डॉ. कृष्णदत्त पालीवाल, पृष्ठ– 460, प्रथम संस्करण–2008) (पैठछ 978–81–8143–755–6)

फुटकर रचनाएँ– केशों की कथा, स्वर्गसहोदर, ये दोनों मंगल घट (मैथिलीशरण गुप्त द्वारा लिखी पुस्तक) में संग्रहीत हैं।

अनूदित (मधुप के नाम से)–

संस्कृत– स्वप्नवासवदत्ता, प्रतिमा, अभिषेक, अविमारक (भास) (गुप्त जी के नाटक), रत्नावली (हर्षवर्धन)

बंगाली– मेघनाथ वध, विहरिणी वज्रांगना (माइकल मधुसूदन दत्त), पलासी का युद्ध (नवीन चंद्र सेन)

फारसी– रुबाइयात उमर खय्याम (उमर खय्याम) (घ)

कविताओं का संग्रह – उच्छवास

पत्रों का संग्रह – पत्रावली ।

काव्यगत विशेषताएँ :–

गुप्त जी स्वभाव से ही लोकसंग्रही कवि थे और अपने युग की समस्याओं के प्रति विशेष रूप से संवेदनशील रहे। उनका काव्य एक ओर वैष्णव भावना से परिपोषित था, तो साथ ही जागरण व सुधार युग की राष्ट्रीय नैतिक चेतना से अनुप्राणित भी था। लाला लाजपत राय, बाल गंगाधर तिलक, विपिनचंद्र पाल, गणेश शंकर विद्यार्थी और मदनमोहन मालवीय उनके आदर्श रहे। महात्मा गांधी के भारतीय राजनीतिक जीवन में आने से पूर्व ही गुप्त जी का युवा मन गरम दल और तत्कालीन क्रान्तिकारी विचारधारा से प्रभावित हो चुका था। 'अनघ' से पूर्व की रचनाओं में, विशेषकर जयद्रथ–वध और भारत भारती में कवि का क्रान्तिकारी स्वर सुनाई पड़ता है। बाद में महात्मा गांधी, राजेन्द्र प्रसाद, और विनोबा भावे के सम्पर्क में आने के कारण वह गांधीवाद के व्यावहारिक पक्ष और सुधारवादी आन्दोलनों के समर्थक बने।

गुप्त जी के काव्य की विशेषताएँ इस प्रकार उल्लेखित की जा सकती हैं –

(१) राष्ट्रीयता और गांधीवाद की प्रधानता

(२) गौरवमय अतीत के इतिहास और भारतीय संस्कृति की महत्ता

(३) पारिवारिक जीवन को भी यथोचित महत्ता

(४) नारी मात्र को विशेष महत्व

(५) प्रबन्ध और मुक्तक दोनों में लेखन

(६) शब्द शक्तियों तथा अलंकारों के सक्षम प्रयोग के साथ मुहावरों का भी प्रयोग

(७) पतिवियुक्ता नारी का वर्णन।

मैथिलीशरण गुप्त जी के भारतीय संस्कृति के आदर्शों में नारी चित्रण :–

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने अपने काव्य में नारी को शिक्षित, आत्मसम्मानी, और स्वाभिमानी दिखाया है. उन्होंने नारी को प्रेम, पवित्रता, और शक्ति का समन्वित रूप माना है. उनके काव्य में नारी के प्रति सहानुभूति प्रकट करके पुरुषों को नारी के प्रति उचित अधिकार देने के लिए प्रेरित किया गया है । मैथिलीशरण गुप्त के काव्य में नारी चित्रण को दायित्वों को प्रतिष्ठित करते हुए दिखाया है। उन्होंने नारी को त्याग, तपस्या, और परिवार कल्याण के लिए व्रत और पतिव्रता होना आवश्यक माना है। उन्होंने नारी को विरही होकर भी दीन–हीन नहीं बल्कि विश्वमानवता के प्रति संवेदनशील और कर्मठ दिखाया है। उन्होंने नारी को शिक्षित, आत्मसम्मानी, और स्वाभिमानी दिखाया है। उन्होंने नारी को राष्ट्रीय आंदोलन में सक्रिय भूमिका निभाने वाली दिखाया है । उन्होंने नारी के दुख–दर्द और पीड़ा की अभिव्यक्ति के ज़रिए समाज में नारी की स्थिति बदलने की कोशिश की है। उन्होंने नारी के प्रति आदर और सम्मान का भाव दिखाया है ।

गुप्त जी नारी पात्रों के चरित्रांकन में अटूट श्रद्धा रखते थे। उन्होंने अपनी नारी पात्रियों के माध्यम से देश की प्राचीन संस्कृति के उन्नयन एवं आदर्श की बात कही। सीता, उर्मिला, यशोधरा, द्रोपदी, उत्तरा, इउडोसिया एवं शकुन्तला

आदि नारियों के माध्यम से गुप्त जी ने भारत की प्राचीन संस्कृति के द्वार खोलकर ऐश्वर्यशाली अतीत की कल्पना पुनः एक बार जागृत कर दी है। भारतीय गौरवमयी संस्कृति की लज्जा कवि ने अपनी इन्हीं नारी पात्रियों के हाथों सौंपदी है। गुप्त जी के सभी नारी पात्रियाँ उदात्त गुणों से विभूषित हैं।

गुप्त जी का हिन्दी साहित्य आदि से अब तक भारतीय संस्कृति की विभन्न विशेषताओं से ओत–प्रोत है। किन्तु कवि ने भारतीय संस्कृति के अथाह सागर में अवगाहन कर जो विचार रत्न उपलब्ध किये हैं तथा अपनी नारी पात्रों के माध्यम से जिन सांस्कृतिक विचारों को व्यक्त किये हैं उनका विवेचन ही प्रस्तुत अध्याय का अभीष्ट है।

मैथिलीशरण गुप्त जी के काव्य में नारी चित्रण की विशेषताएं :–

- नारी के प्रति आदर और सम्मान का भाव
- नारी के दुख–दर्द और पीड़ा की अभिव्यक्ति
- नारी के त्यागमय रूप को अंकित करना
- नारी के मातृत्व और पत्नीत्व को दिखाना
- नारी की स्वतंत्र सत्ता और महत्ता को दिखाना
- नारी की करुणा को दिखाना
- नारी के क्रांतिकारी और विद्रोहिणी रूप को दिखाना
- नारी को दायित्वों को निभाने वाली के रूप में दिखाना
- नारी को नवीन विचारों की अभिव्यक्ति करने वाली के रूप में दिखाना

गुप्त जी ने भारतीय संस्कृति के आदर्शों का प्रतिफलन नारी चित्रण के माध्यम से किस प्रकार किया है–उन्हें हम चार भागों में विभाजित कर सकते हैं–

(1) सामाजिक जीवन सम्बन्धी आदर्श

(2) पारिवारिक जीवन सम्बन्धी आदर्श

(3) राजनैतिक आदर्श

(4) धार्मिक आदर्श

इनकी विवेचना से ही गुप्त जी के काव्य में वर्णित नारी का सांस्कृतिक रूप स्पष्ट हो जायेगा।

(1) सामाजिक जीवन सम्बन्धी आदर्श–

गुप्त जी के नारी पात्रों में सामाजिक आदर्श कूट–कूटकर भरी हुई है। वे भारतीय समाज का प्रतिनिधित्व करने वाली हैं। वे सामाजिक बन्धनों को व्यक्तित्व के विकास में बाधक नहीं साधक मानती हैं। गुप्त जी ने अपनी नारियों को सामाजिक परिवेश में मर्यादित रूप में रखा है। मर्यादा तथा नियमों के नाम पर स्वातन्त्र्य का अपहरण करना गुप्त जी को अभीष्ट नहीं था। इस कारण गुप्त जी की नारियों का समाज में एक अभीष्ट स्थान था। उन्होंने उसे जीवन की प्रत्येक स्थल पर अपनी मर्यादा में रखा है। गुप्त जी की नारी पात्रों में प्राचीनता और नवीनता का अद्‌भुत समन्वय है।

गुप्त जी की नारियाँ भारतीय परम्पराओं के प्रति पूर्ण आस्था रखने वाली हैं। सामाजिक जीवन की प्रथायें और संस्कार भी संस्कृति के भव्य निदर्शन है जिनमें संस्कृति का स्वरूप अनन्तकाल से संरक्षित चला आ रहा है। उर्मिला द्वारा विजय यांत्रा पर जाने वाले शत्रुघ्न का तिलक लगाना–

"श्रुतिकीर्ति, तनिक रोली तो लाना, टीका कर दूँ बहन, इन्हें है झटपट जाना।"

एवं 'साकेत' के दशम सर्ग में उर्मिला के चौक पूरने–

"कहते–'हम चौक पूरते' 'लड़की हो?'– हँसतात घूरते।' तथा राखी बाँधने–

"प्रभु ने चलते हुए कहा–'अब शान्ते भय सोच क्या रहा।

भगिनी, जय–मूर्ति–सी झुकी, यह राखी जब बाँध तू चुकी?"

तक की प्रथाओं का उल्लेख है। उसने अपनी माता के ब्रतों का भी उल्लेख किया है–

"तनुजों पर प्राण वारती, तनु की भी सुध थी बिसारती।

करती व्रत वे नये–नये, कृश होती, पर मग्न थी अये।"

साथ ही साथ नारियों के मन में व्याप्त योग शाप, सौगन्ध, देवपूजा' इन सभी का उल्लेख मिलता है। अभिमन्यु के युद्ध में जाते समय उत्तरा का शंकालु होना–

"अपशकुन आज परन्तु, मुझको हो रहे सच जानिये, मत जाइये सम्प्रति समर में प्रार्थना यह मानिये, जाने न दूँगी आज मैं प्रियतम तुम्हें संग्राम में, उठती बुरी हैं भावनायें हाय! इस हृदाम में।"

विष्णुप्रिया का. ससुराल में प्रथम प्रवेश के समय देहरी पर ठोकर लग जाने से आशंकित होना आदि भावनायें इस बात की द्योतक हैं कि वे प्राचीन परम्पराओं में पूर्णतया आबद्ध हैं।

गुप्त जी की नारियाँ गंगा, यमुना, सरयू, विन्ध्य, हिमालय आदि सभी को मान्यता प्रदान करती हैं। इनमें उनका व्यक्तित्व घुल–मिल गया है, जिसका कारण यह है कि उनका महत्व भौतिक ही नहीं अपितु धार्मिक भी है 'साकेत' की उर्मिला साकेतवासियों को गंगा, यमुना और सरयू के नाम पर उत्साहित करती हैं–

"विन्ध्य–हिमालय–भाल, भला, झुक जाय न धीरो, चन्द्र–सूर्य–कुल–कीर्ति–कला रूप जाय न वीरों,

चढ़कर उत्तर न जाय, सुनो कुल–भौतिक मानी, गंगा–यमुना–सिन्धु और सरयू का पानी।"

सीता वन को प्रस्थान करते समय गंगा को देखकर आनन्द विभोर हो उठती हैं। वह मुक्त कण्ठ से सीता की जय–जयकार करती हुई कहती हैं–

"जय गंगे, आनन्द तरंगे कलरवे, अमलअचले, पुण्यजले, दिवसम्भवे।

सरस रहे यह भरत–भूमि तुममें सदा, हम सबकी तुम एक चलाचल सम्पदा।।"

गुप्त जी की नारियाँ भारतीय संस्कृति से पूर्णतया प्रभावित हैं। गुप्त जी ने संस्कारों का बड़ा महत्व माना है। भारतीय प्रणाली के अनुसार कुल सोलह संस्कार हैं लेकिन उन्होंने विवाह और मृत्यु संस्कार का ही वर्णन किया है। इनमें भी विवाह संस्कार का अधिक वर्णन हुआ है। गुप्त जी ने 'साकेत', 'चन्द्रहास', 'विष्णुप्रिया', 'रंग में भंग' की नायिकाओं के माध्यम से विवाह पर प्रकाश डाला है। उर्मिला के इस कथन से विवाह के सम्बन्ध में नारी के उद्‌गार का सर्वोत्कृष्ट उदाहरण मिलता है। उसने विवाह को त्याग और स्वीकृति दोनों ही माना है, क्योंकि विवाह में पति–पत्नी दोनों अपने–आपको एक–दूसरे को सौंपते हैं इसीलिए उसे 'स्वीकार' भी कहा जा सकता है और त्याग भी।"

भारतीय संस्कृति में व्यक्ति के मृत्यु के पश्चात् श्राद्ध आदि कार्य में श्रद्धा को बहुत महत्व दिया गया है। 'साकेत' में कैकेयी ने इस तथ्य पर संकेत करते हुए कहां है कि सत्य तो यह भी है कि श्राद्ध श्रद्धा पर ही निर्भर है, आडम्बर पर नहीं–

"है श्रद्धा पर ही श्राद्ध, न आडम्बर पर।"

गुप्त जी ने नारी जीवन को प्रभावित करने वाली सती प्रथा पर भी अपने विचार व्यक्त किये हैं। पति की मृत्युपरान्त मुगल–काल में नारियों को अपने सतीत्व की रक्षा बहुत कठिन हो गया था इस कारण इस प्रथा का चलन बढ़ गया था। किन्तु आधुनिक मनिषियों ने इसका खण्डन किया। विधवा विवाह को प्रोत्साहित किया। गुप्त जी पूर्णतया भारतीया संस्कृ ति के अनुयायी थे इसलिए उन्होंने सतीप्रथा का खण्डन तो किया लेकिन विधवा–विवाह को मान्यता नहीं प्रदान कर सके। उनके समस्त काव्यों में से केवल 'रंग में भंग' काव्य में ही सती होने की घटना का उल्लेख मिलता है। लालसिंह नरेन्द्र की कन्या पति की मृत्यु हो जाने पर सती हो जाना ही सर्वोत्तम माना है, वह मरण में ही अपना हित समझती थी–

"यों अनके प्रकार उसने बचन बहुतेरे कहे, कह सका कोई न कुछ सब हाय ! कर सुनते रहे। फिर वही होकर रहा भवितव्य था जो अन्त में शान्ति युक्त सती हुई वह कीर्ति छोड़ दिगन्त में।'

इसके अतिरिक्त अन्य विधवाओं–उत्तरा, कौशल्या, कैकेयी, सुमित्रा के सती होने का उल्लेख तो नहीं है किन्तु उनको संयमित जीवन व्यतीत करने के लिए कवि ने अवश्य कहा है। वे विधवा नारी को भोगों से सर्वथा दूर रखकर आजीवन अपने पति के स्मरण में ही जीवन व्यतीत करना भारतीय आदर्श मानती थी–

"देवियों ऐसा नहीं है वैधव्य, भाव भव में कौन वैसा भव्य ?

धन्य वह अनुराग निर्गत–राग और शुचिता का अपूर्व सुहाग ।

सहमरण के धर्म से भी ज्येष्ठ, आयुभर स्वामि–स्मरण है श्रेष्ठ ।'

दशरथ की रानियाँ अपना जीवन निःसार समझने लगती हैं–

"हाय भगवन! क्यों हमारा नाम ?

अब हमें इस लोक में क्या काम ?

भूमि पर हम आज केवल भार।"

शिष्टाचार का पालन करना भी भारतीय संस्कृति का आदर्श है। भारतीय संस्कृति में पत्नी पति का नाम कभी नहीं लेती क्योंकि वह पति को अपने से बड़ा मानती है तथा उनके लिए आदर का भाव व्यक्त करती है। पत्नियाँ पतियों को आर्यपुत्र तथा पत्नियों को आर्ये, देवी, शुभे आदि कहकर सम्बोधित करते थे। 'साकेत' की विरहिणी उर्मिला विस्मृति अवस्था में भी लक्ष्मण के लिए 'लक' शब्द निकल जाने पर पश्चाताप करती हैं–

"अधम उर्मिले! हाय निर्दया, पतित नाथ है? तू सदाशय, मुँह दिखायेगी क्या उन्हें अरी, मर संशया, क्यों न तू मरीं।"

और चुप हो जाती हैं क्योंकि संकोच, शील उसकी विभूति है।" वनगमन के समय सीता से जब ग्राम वधूयें राम का परिचय पूछती हैं तो एक आधुनिका की भाँति यह नहीं कहती किं आप श्रीयुत राम मेरे पति हैं बल्कि वह बड़े शिष्ट रूप में कहती हैं–

"गोरे देवर, श्याम उन्हीं के ज्येष्ठ हैं।"

माता का श्रृंगार वर्णन भारतीय संस्कृति में अमर्यादित माना जाता है। आधुनिक काल में ऐसे बहुत कम ही कवि हैं जिन्होंने इसका विवेचन थोड़े बहुत रूप में न किया हो लेकिन गुप्त जी अपने काव्य में नारियों के श्रृंगार वर्णन करते समय इस पक्ष की ओर काफी सतर्क रहे हैं। जहाँ कहीं भी ऐसा अवसर आया है वहाँ कवि श्रद्धा और संकोच से झुक गया है। साकेत के प्रथम सर्ग और आठवें सर्ग में इस प्रकार के अनेक चित्र दृष्टिगत होते हैं, ऐसे स्थलों पर कवि अपने को श्लेष या अन्य कौशल से बचा गया है। सीता के उरोजों का वर्णन बड़े शिष्ट ढंग से किया है–

"अंकुर–हितकर थे कलश–पयोधर पावन जन–मातृ–गर्वमय कुशल वदन भव–भावन।"

भारतीय संस्कृति में भारत की नारियाँ आतिथ्य सत्कार में अन्य देशों की अपेक्षा अग्रणी हैं। 'द्वापर' की विधृता, जयभारत की कुन्ती और सिद्धराज की मीनलदे इस क्षेत्र में अग्रणी नारियाँ हैं।

विधृता अपने अतिथि का यथोचित सत्कार नहीं कर पाती जिसका उसे बहुत दुःख है। अतिथि सत्कार जिस देश की प्राचीन संस्कृति रही है ऐसे देश की नारी होते हुए भी वह अतिथ का सत्कार नहीं कर पाती–

"जहाँ 'दीयतां' तथा 'भुज्यतां' मुख्य यही दो बातें,

जहाँ अतिथि हो आप देवता, आज वहीं धाते।"

इसके लिए वह अपने पति को कटु शब्दों से धिक्कारती हैं। अन्त में इसी पाश्चाताप के कारण वह अपने प्राण भी त्याग देती हैं–

"जाती हूँ, जाती हूँ अब मैं, और नहीं रूक सकती इस अन्याय–समक्ष, मरूं मैं, कभी नहीं झूक सकती।"

सिद्धराज में राजमाता मीनलदे को भी अपने अतिथि का पूरा–पूरा ध्यान है। नारी की संवेदना नारी के प्रति अधिक रहती है इसका उदाहरण मीनलदे की शरण में आयी हुई क्षत्राणी के साथ किया गया व्यवहार है। वह अपने मन्त्रियों को आदेश देती हैं कि–

"एक माता–पुत्र यहाँ मेरे दो अतिथि हैं, उनका प्रबन्ध कर देना,

सोमनाथ की यात्रा सब भाँति शान्ति सौम्य कर हो उन्हें, देना पुरस्कार उस क्षत्रिय कुमार को।"

कुन्ती अपने द्वार पर अतिथि के रूप में आये हुए द्विज परिवार को देखकर अपने आपको कृतकत्य मानती हैं–

"गृहनाथ हैं? मैं अतिथि हूँ, सुत साथ हैं।"

झट ब्राह्मणी चौंकी, चली, आओ, अहा, हम सब विशेष सनाथ हैं।"

भारतीय संस्कृति का प्रतीक कला कौशल है। गुप्त जी की नारियाँ इस क्षेत्र में सिद्धहस्त हैं। द्रोपदी, उर्मिला, विषया, तिलोत्तमा ये सभी नारियाँ संगीत तथा कला में निपुण हैं। ये अपनी कला एंव संगीत के माध्यम से मन के भावों को प्रकट करती हैं। 'जयभारत' में सैरन्ध्री अपने मन के भावों को सुदेवणा पर चित्र बनाकर ही प्रकट करती हैं–

"रानी बोली–"धन्य तुलिका है सखि तेरी,

कला–कुशलता हुई आप ही आकर चेरी,

उस पर तेरा जो भाव है, मैं उसको हूँ जानती।"

'साकेत' में लक्ष्मण अपनी पत्नी की चित्रकला को देखकर चित्रलिखित से रह गये। 'तिलोत्तमा' नाटक में रम्भा तथा तिलोत्तमा तथा 'चन्द्रहास' में विषया–

"कुसुमित हरित भरित उपवन है,

सुरभित मलयज मृदुल पवन है।

ललित समय कृत विलुलित मन है।।"

के द्वारा गाये गीतों से उनकी संगीत की निपुणता का परिचय मिलता है।

इस प्रकार गुप्त जी के काव्य में वर्णित नारियाँ समाज में अर्द्धांगिनी और समानाधिकारिणी हैं वे सामाजिक जीवन की अन्यान्य संस्कृति विशेषताओं का उद्घाटन करने वाली हैं। इनके चरित्र में हमें भारतीय नारियों के जीवन सम्बन्धी अनेका अनेक चित्र मिलते हैं। नारी जाति के गौरव को उच्चतर भाव–भूमि प्रदान करने के क्षेत्र में उनकी इस कल्पना का योग सत्य है। सामाजिक विकास के लिए नारी के उदात्त गुणों से युक्त होना आवश्यक है तभी उससे सामाजिक एवं राष्ट्रीय हितों की अपेक्षा की जा सकती है। गुप्त जी ने इसी भावना से प्रेरित होकर ही उदात्त नारी चरित्रों को ही राष्ट्रीय क्षेत्र में अवतीर्ण कराया है।

(ख) पारिवारिक आदर्श–

नारी के जीवन में परिवार का विशेष महत्व है परिवार के बिना उसका विकास सम्भव नहीं है। गुप्त जी परम्परानिष्ट और संस्कारी कवि हैं। भारतीय संस्कृति के सम्पूर्ण अंगों में उनकी प्रगाढ़ आस्था है। भारतीय संस्कृति में अधिक महत्व परिवार को ही दी गयी है क्योंकि घर ही समाज, जाति, राष्ट्र एवं विश्व की आधारशिला हैं। गुप्त जी ने भारतीय परिवार की संयुक्त प्रणाली पर अधिक बल दिया है। 'साकेत', 'यशोधरा' तथा 'सिद्धराज' में राज परिवार का वर्णन किया है तथा 'विष्णुप्रिया', 'चन्द्रहास' एवं अनघ में कवि ने मध्यवर्गीय संयुक्त परिवार की झाँकी प्रस्तुत की है।

राजा दशरथ का परिवार एक सभ्य तथा सुसंस्कृत राज परिवार है। इसलिए 'साकेत' का पारिवारिक आदर्श बहुत ऊँचा है। इस समुन्नत परिवार की झाँकी गुप्त जी ने इन शब्दों में प्रस्तुत की है–

"राम–सीता, धन्य धीराम्बर–इला, शौर्य–सह सम्पति लक्ष्मण–उर्मिला।

भरत कर्ता, माण्डवी उनकी क्रिया, कीर्ति–सी श्रुतिकीर्ति शत्रुघ्न प्रिया।

ब्रह्म की है चार जैसी पूर्तियाँ, ठीक वैसी चार माया–मूर्तियाँ।।"

'साकेत' में दशरथ के परिवार की सभी स्त्रियाँ अपने कर्तव्यों के प्रति सचेत तथा परस्पर सौहार्द्रपूर्ण व्यवहार करने वाली हैं। भ्रम में पड़कर एक तुच्छ दासी के भड़काने पर इस परिवार में कलह उत्पन्न हो जाता है इसकी प्रतीक कैकेयी हैं। सन्देह की भावना परिवार में किस प्रकार से कलह उत्पन्न कर देती है यह गुप्त जी ने कैकेयी के माध्यम से बताया

है। यत्र–तत्र कुछ ऐसे भी प्रसंग आ गयें हैं जो भारतीय संस्कृति की दृष्टि से श्लाघनिय नहीं कहे जा सकते। यथा लक्ष्मण का उर्मिला के चरणों में गिरने का जो वर्णन किया गया है–

"गिर पड़े सौमित्र प्रिया–पद–तल में, वह भींग उठी प्रिय चरण धरे दृगजल में।"

यह बात भारतीय संस्कृति के विपरीत है, किन्तु पति–पत्नी में ऐसा होना अस्वाभाविक बात नहीं है। इसलिए कवि को ऐसे स्थल पर दोषी नहीं माना जा सकता है।

'यशोधरा' राज परिवार के रूप में वर्णित दूसरा परिवार है। किन्तु उसमें मुख्य रूप से यशोधरा का ही चित्रण किया गया है। उसका व्यक्तिगत जीवन हिन्दू नारी की निरन्तर तपस्या की कथा है और पारिवारिक जीवन हिन्दू परिवार का जीवन है। कवि ने दो पंक्तियों में उसका सार प्रस्तुत कर दिया है–

"अबला–जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी, आँचल में है दूध और आँखों में पानी।"

चन्द्रहास, विष्णुप्रिया तथा अनघ आदि में मध्यमवर्गीय संयुक्त परिवार का चित्रण हुआ है। इसमें प्रस्तुत सभी नारियां एक दूसरे की भावनाओं से परिचित हैं, जिसके कारण उनका एक–दूसरे से सौहार्द्र और प्रेमपूर्ण सम्बन्ध है। 'चन्द्रहास' नाटक में ननद–भाभी के प्रेमपूर्ण व्यवहार देखने की झलक मिलता है। विषया अपनी भाभी से प्रेम जैसे विषय पर भी बड़े सुरुचिपूर्ण ढंग से चर्चा करती हैं। 35 'विष्णुप्रिया' में विष्णुप्रिया अपनी सास की सेवा–सुश्रूषा के कारण उनके कहने पर भी अपने मायके नहीं जाती। शची भी अपनी बहू के मान की रक्षा के लिए पुत्र से भेंट के लिए नहीं जाती–

"लौट जा निताई, तब मैं भी नहीं जाऊँगी।

यह नहीं उसकी तो मैं भी कह, कौन हूँ?

अब अधिकार इसे रोकने का क्या उसे? देखूँ, मूख मैं ही तब क्यों उस कृतघ्न का।"

भारतीय संस्कृति में भी नारी के पत्नी रूप तथा गृहणी रूप को ही अधिक प्रधानता दी गयी है इसका कारण यह है कि जब नारी पितृ–गृह को छोड़कर पति गृह में प्रवेश करती है तब से उसी को अपना समझने लगती है। 'साकेत' में लक्ष्मण ने उर्मिला से वार्तालाप करते समय कहा भी है–

"जन्म–भूमि–ममत्व कृपया छोड़कर,

चारू–चिन्तामणि–कला से छोड़कर,

कल्पवल्ली–सी तुम्हीं चलती हुई,

बाँटती हो दिव्य फल फलती हुई।"

वे पत्नी के गौरव की परिभाषा करते हुए कहते हैं–

"भूमि के कोटर, गुहा, गिर गर्त भी,

शून्यता नभ की सलिल आवर्त भी,

'प्रेयसी' किसके सहज संसर्ग से,

दीखते हैं प्राणियों को स्वर्ग से।"

मैथिलीशरण गुप्त जी ने भारतीय पत्नी के जीवन का आदर्श ही यह माना है कि वह अपना सर्वस्य अपने पति के चरणों में अर्पित कर दें। पति को ही अपने सुख–दुःख का भागीदार बनाये। उर्मिला ने भारतीय आदर्श पत्नियों की ओर लक्ष्य करते हुए स्पष्टरूप में कहा है–

"खोजती हैं किन्तु आश्रय मात्र हम, चाहती हैं एक तुम सा पात्र हम, आन्तरिक सुख–दुःख हम जिसमें धरें, और निज भव–भार यों हलका करें।"

इस प्रकार हम देखते हैं कि पति–पत्नी का सम्बन्ध रति अथवा श्रृंगार ही मनुष्य जीवन की प्रमुख भावना है। जिसको गुप्त जी भी अस्विकार नहीं करते। जीवन के इस पक्ष का सजीव चित्रण राम–सीता के मधुर दाम्पत्य जीवन का चित्रण करते समय किया है।

पति–पत्नी के मध्य मानसिक प्रेम का स्थान अधिक है–किन्तु संयोग में शारीरिकता अनिवार्य है, क्योंकि यह भावना प्रकृति प्रदत्त है। 'साकेत' में उर्मिला एक दिन की घटना अपनी सखी से कहती हैं–

"आये एक बार प्रिय बोले–एक बात कहूँ, विभय परन्तु गोपनीय सुनो कान में। मैंने कहा, कौन यहाँ? बोले–चित्र तो है, सुनते हैं वे भी राजनीति के विधान में।

लाल किये कर्णमूल होठों से उन्होंने कहा–क्या कहूँ सगद्द हूँ, मैं भी छद–दान में, कहते नहीं हैं, करते हैं कृति, सजनी मैं, खीच के भी रीझ उठी उस मुसकान में।"

पति–पत्नी के बीच ऐसे अवसर आते रहते हैं। संयोगावस्था की एक शिशिर कालीन घटना की स्मृति आ जाने पर उर्मिला अपनी सखी के सम्मुख उसका उल्लेख करके कहती हैं–

"आये सखि, द्वार–पटी हाथ से हटा के प्रिय,

वंचक भी वंचित–से कम्पित विनोद में,

ओढ़ देखो तनिक तुम्हीं तो परिधान यह,

बोले डाल रोमपट मेरी इस गोद में।

क्या हुआ, उठी मैं झट प्रावरण छोड़कर, परिणत हो रहा था पवन प्रतोद में, हर्षित थे तो भी रोम–रोम हम दम्पति के, कर्षित थे दोनों बाहु–बन्धन के मोद में।"

चौदह वर्ष के वनवास के बाद जब उर्मिला के पति लक्ष्मण आतें हैं तो ऐसे समय में संयोग की भावनाओं का सागर उमड़ पड़ता है। गुप्त जी ने दो ही पंक्तियों में इसका सजीव चित्र उपस्थित कर दिया है–

"लेकर मानों विश्व–विरह उस अन्तःपुर में,

समा रहे थे वे एक–दूसरे के उर में।"

राम और सीता के संयोग का आधिक्य रहा कि 'वे वन में भी गृहीं' रहे। उनको सम्भवतः रोमांस का अवसर भी अधिक मिला। उनका परिहास अमित प्यार से भरा हुआ है। सीता वन के वृक्षों को सिंचती फिर रही हैं। राम उनकी इस प्रकृति सौन्दर्य श्री का पान कर रहे हैं, सीता को 'कर–तल–तक', 'दवल–दल मग्ना' देखकर उनका हृदय अनासय कह उठता है–

"हो जाना लता न आप लता–संलग्ना,

ऐसा ने हो कि मैं फिरूँ खोजता तुमको।"

सीता ने अपनी कुटिया में फल–फूल लगा रखे थे उनमें सीताफल भी था, राम उसी को लक्ष्य करते हुए सीता से कहते हैं–

"वह सीताफल जब फलै तुम्हारा चाहा–मेरा विनोद तो सफल, हँसी तुम आहा।"

गुप्त जी ने दाम्पत्य जीवन को समग्र रूप से देखा है और उसी के अनुसार आदर्शों की तलाश की है। उन्होंने ऐसे आदर्शों को लिया है जिसे सामाजिक जीवन में ग्रहण किया जा सके। इस दृष्टि से कहा जा सकता है कि गुप्त जी के काव्य में आदर्श और यथार्थ दोनों का ही समन्वय है।

गुप्त जी के काव्य में सभी पत्नियाँ कौशल्या, सीता, उर्मिला, माण्डवी, विष्णुप्रिया, यशोधरा, रानकदे एवं द्रोपदी सहयोग एंव आदर्श की प्रतीक हैं। कौशल्या अपने पति की आज्ञाकारी पत्नी हैं। वह दशरथ की आज्ञा होने पर ही अपने पुत्र राम को वन जाने कीं अनुमति प्रदान करती हैं–

"जाओ, तब बेटा, वन ही, पाओ नित्य धर्म–धन ही,

जो गौरव लेकर जाओ, लेकर वही लौट आओ।

पूज्य–पिता–प्रण रक्षित हों, माँ का लक्ष्य सुलभित हो,

घर में घर की शान्ति रहे, कुल में कुल की कान्ति रहे।।"

सीता भी अपने पति के पथ की अनुगामिनी बनती हैं–

"सबके हित में वन में भी, निर्जन, सघन गहन में भी,

सब व्रत–नियत निबाहूँगी, सबका मंगल चाहूँगी।"

उर्मिला ने तो सबसे बड़ा आदर्श उपस्थित किया है–

(क) "मानस–मन्दिर में सती, पति की प्रतिमा थाप,

जलती–सी उस विरह में, बनी आरती आप।"

उर्मिला पति की अनुगामिनी तो नहीं बन सकी लेकिन विरह काल को बड़े त्याग और संयम के साथ काटी हैं–

(ख) "स्वामि–सहित सीता ने नन्दन माना सघन गहन कानन भी,

उर्मिला वधू ने वन किया उन्हीं के हितार्थ निज उपवन भी।"

माण्डवी का तो जैसे कार्य ही पति की सेवा करना है। परिवार में उत्पन्न समस्त अमंगल का कारण भी वह अपने को ही मानती हैं। इसी कारण उसे परिताप भी है वह व्यथित शब्दों में भरत से कहती हैं–

"हाय नाथ, धरती फट जाती, हम तुम कहीं समा जाते,

तो हम दोनों किसी मूल में रहकर कितना रस पाते।"

'सिद्धराज' में रानकदे, 'रंग में भंग' में लाल सिंह की पुत्री, 'जयद्रथ–वध' में उत्तरा पति के मृत्युपरान्त अपना जीवन निःसार मानती हैं। यह तीनों स्त्रियाँ अपना स्थान जलती चिता में मानती हैं। लाल सिंह की पुत्री ने तो पति की याद में आत्माहुति ही दे दी–

"बात भी न अब तक जिससे थी हुई अनुराग में,

यों उसी के साथ जीवित जल गई वह आग में।

आर्य–कन्या मान लेती स्वप्न में भी पति जिसे,

भिन्न उससे फिर जगत में और भज सकती किसे ।"

अभिमन्यु की मृत्यु के पश्चात् उर्मिला का विलाप अत्यन्त मार्मिक है। जयसिंह के बार–बार हठ करने पर भी रानकदे ने राजमहल में रहने से इनकार कर दिया। इस प्रकार यह स्त्रियाँ पति के बिना अपना जीवन शून्य मानती हैं।

गुप्त जी परिवार में आदर्श माता को महत्व देते हैं। 'साकेत' में कौशल्या एवं सुमित्रा आदर्श माताएँ हैं। वे हमेशा अपने पुत्रों को सप्रेरणा देती हैं, कैकेयी का अपने पुत्र के प्रति वात्सल्य मोहजनित अन्धा वात्सल्य है, जिसके वशीभूत होकर वह समस्त परिवार को छिन्न–भिन्न कर देती हैं। उसकी शंका का एक ही कारण है–

"भरत–से सुत पर भी सन्देह, बुलाया तक उन्हें जो गेह। '

यशोधरा पर तो अपने पुत्र के पालन–पोषण का समस्त भार है वह इसी में अपने जीवन को सार्थक मानती हैं। आँखों में पानी और आँचल में दूध यह उसकी जीवन कथा है।

सास–बहु का स्थान भी परिवार में आदरास्पद माना गया है। सास–बहु का परस्पर सम्बन्ध माता–पुत्री के समान होता है। गुप्त जी के काव्य में वर्णित सीता, माण्डवी, विष्णुप्रिया आदि बहुएँ अपनी सासों की सेवा करना अपना कर्तव्य समझती हैं। यशोधरा मानिनी अधिक हैं इस कारण उसका अपनी सास के साथ इस प्रकार प्रेमपूर्ण सम्बन्ध नहीं है जैसा कि विष्णुप्रिया और सीता आदि का है। इन गार्हस्थ चित्रों में भारतीय संस्कृति का परमोज्ज्वल स्वरूप मिलता है। परिवार में वैयक्तिक इच्छाओं का कोई महत्व नहीं है। वहाँ तो सर्वहित को ध्यान में रखकर समन्वयात्मक दृष्टि से जीवन यापन करना अपेक्षित है नहीं तो कैकेयी जैसी माता या गृहणी के आचरण से सारा परिवार विघटित भी हो सकता है। सुखी और समृद्धिशाली परिवार के लिए सीता, उर्मिला, माण्डवी, विष्णुप्रिया, यशोधरा जैसी नारियों की आवश्यकता हो जो परिवार के लिए सब कुछ न्यौछावर कर सकती हैं।

(ग) राजनीतिक आदर्श :–

गुप्त जी की नारी के पारिवारिक एवं सामाजिक आदर्श की भाँति राजनीतिक जीवन की भी झाँकी मिल जाती है। गुप्त जी का युग राष्ट्रीय चेतना के विकास का युग रहा है, उस समय राजनीतिक एवं सामाजिक दोनों ही स्तरों पर गान्धीवादी सिद्धान्तों की स्थापना हो रही थी। अतः उससे प्रभावित होकर ही गुप्त जी ने भी नारी वर्ग को व्यावहारिक रूप में राष्ट्रीय स्वरूप प्रदान कर उसे राजनीतिक क्षेत्र में लाकर खड़ा कर दिया। गुप्त जी के सभी प्रमुख काव्य ग्रन्थों में नारी के साहस–शौर्य, वीरता तेज, स्वाभिमान–गर्व, देश–प्रेम, देश–सेवा तथा जाति–गौरव, कर्तव्यनिष्ठा आदि भावों का भव्य रूप देखने को मिलता है। यहाँ की संस्कृति की सर्वप्रमुख विशेषता यह है कि यहाँ दूसरे के देश पर बलात् अधिकार करना, पराये धन को अपहरण करना, दूसरों को सताना यह सब कभी भी श्रेयस्कर नहीं माना जाता है। यहाँ की नारी उदार हृदया है, उसमें सेवा भावना की अधिकता है।

गुप्त जी के 'साकेत' में उर्मिला में पापी धन को अधम धन के बराबर मानती हैं। उसे अपने देश में लाना तो दूर की बात है उसे छूना तक अधर्म मानती हैं। इसी कारण साकेतवासियों के लंका लूटने के प्रस्ताव को सुनकर गरज जाती है–

"नहीं, नहीं, पापी का सोना, यहाँ न लाना, भले सिन्धु में वहीं डुबोना।

धीरों धन को आज ध्यान में भी मत लाओ, जाते हो तो मान–हेतु ही तुम सब जाओ।।"

उर्मिला का यह रूप साक्षात् भारत माता का रूप है। उसका सन्देश देश की आत्मा का पुकार है। वह व्यर्थ ही किसी पर आक्रमण करना पसन्द नहीं करती है। वह सभी के साथ दयापूर्वक और प्रेम के साथ जीवन यापन करने का संदेश देती है–

"पावें तुमसे आज शत्रु भी ऐसी शिक्षा,

जिसका अर्थ हो दण्ड और इति दया–तितिक्षा ।"

'पृथ्वीपुत्र' में जेनी तथा 'अनघ' काव्य में भोजक की भार्या साम्यवादी विचारधारा का समर्थन करती हुई पूँजीवाद के विरूद्ध आवाज उठाती हैं। वह अपने पतियों के संग्रह की नीति का पर्दाफाश करती हैं–

"दुर्विध नरों का धन हरे, अबला जनों का तन हरे,

यह सब सहा जाता नहीं, चुप भी रहा जाता नहीं।"

उदारतावश उनको दीन–दलितों पर किये गये शोषण मार्क्स की तरह जैनी भर्त्सना करती हैं–

(क) "हाँ, लो पियो, वह ला रही। पर मधु नहीं, कुछ ध्यान है यह दीन–शोषित–पान है।"

(ख) "बस–बस, मार्क्स हा। मैं सुन सकती नहीं, विस्मय! तुम्हारी यह वाणी थकती नहीं।

जान पड़ता है, मैं खड़ी हूँ उन्हीं दीनों पर, धन–जन अन्न–आस्था आश्रय–विहिनों पर।"

राष्ट्रीय सेवा की भावना मूल रूप से उर्मिला, राधा, जेनी, सुरभि आदि नारियों में विभिन्न रूपों से विद्यमान है। ये नारियाँ मुख्य रूप से राधा तथा उर्मिला अपने व्यक्तिगत धरातल से ऊपर उठकर विश्वकल्याण के लिए प्रवृत्त हो जाती हैं। राधा के लिए गोपियों ने कहा भी है और राधा स्वयं यही कहती हैं–

"उसे जगत की पीड़ा, छूट गई जिसमें पड़ कर हा। व्रज की–सी वह क्रीड़ा।"

पन्त जी की नारियाँ इसी त्याग सेवा, उत्तरदायित्व आदि की भावना से पूर्ण होकर प्रजातन्त्र प्रणाली का समर्थन करती हुई दिखती हैं। गुप्त जी की नारी पात्रों में राष्ट्रीय भावना का ओत–प्रोत है उर्मिला की यह उक्ति यह सिद्ध करती है–

"मैं शासन नहीं, आज सेवा की प्यासी।" उसकी सेवा भावना को व्यक्त करती है।

(घ) धार्मिक आदर्श :–

भारत की प्रत्येक नारी धार्मिक विचारों वाली है, इसलिए भारत को धर्म प्रधान देश कहा गया है। गुप्त काव्य में सीता, उर्मिला, कौशल्या, द्रोपदी, यशोधरा, मीनलदे आदि नारियों में उस अलौकिक सत्ता के प्रति अटूट श्रद्धा एवं विश्वास का भाव भरा हुआ है। सभी नारियाँ सगुण के प्रति विश्वास करने वाली हैं। यहां के धर्म की सांस्कृतिक विशेषता तीर्थस्थल, दान, पुण्य, व्रत आदि हैं। 'साकेत' में राम–राज्याभिषेक के समय कौशल्या 'पवित्रता' से पली हुई देवार्चन में लगी हुई हैं।

और उनकी पुत्रवधू भी कभी आरती, धूप कभी लाकर देती हैं।" इसी प्रकार सीता की माता अपनी पुत्रियों के लिए वरदायिनी माता से–

"वर दायिनी माँ, निवाहिये, वर ऐसे वर–चार चाहिये।"

कहकर प्रार्थना करती हैं। पूजा के समान ही भारत में प्रसाद का भी बड़ा महत्व है। कौशल्या माता अपने पुत्र राम से प्रसाद ग्रहण करने का आग्रह करती हैं–

"जियो, जियो बेटा! आओ, पूजा का प्रसाद पाओ।"

यशोधरा दीपदान का पूजन करती हैं–

"तुझे नदीश मान दे नदी, प्रदीप–दान ले।"

नारियाँ उपवास व्रत को भी पूजा–अर्चना के साथ बड़ा महत्व देती हैं–

"उर्मिला रानी, करना न सोच मेरा इससे, व्रत में विघ्न पड़े जिससे ।"

तीर्थाटन की भावना का आभास मीनलदे के तीर्थयात्रा पर जाने के प्रसंग से मिलता है–

"किन्तु तीर्थ–यात्रा करने की मुझे इच्छा थी।

व्रज तो हमारे प्रान्त का ही प्रतिवेशी है,

जाके वही इच्छा हुई–द्वारका भी जाऊँ मैं,

माखन चुराकर हमारे भाग के, राजा बन बैठे जहाँ।"

जीवन में जब कभी ऐसी स्थिति आ जाती है कि ईश्वर पुकार के अलावा और कोई सहारा नहीं रह जाता। 'मंगलघट काव्य में जब दुःशासन द्वारा द्रोपदी को अपनी लज्जा जाती हुई दिखती है तब प्रभु कृष्ण का ही पुकार कर कहती हैं–

"हे अन्तर्यामी मधुसूदन कृष्णचन्द्र, करूणासिंधो नहीं जानते हो क्या केशव कष्ट पा–रही हूँ जैसे।"

निष्कर्ष :–

गुप्त जी की नारियों में श्रद्धा, भक्ति, जप, तप, दान, शुभ कर्म आदि की महत्ता के साथ–साथ विविध विधानों और धार्मिक भावनाएँ से कूट–कूटकर भरी पड़ी है। उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि गुप्त काव्य में वर्णित नारियों में भारत के प्राचीन सांस्कृतिक मूल्यों के प्रति आस्था के साथ–साथ नवयुग की चेतना का विश्वास भी मिलता है। उनके जीवन में त्याग और कर्मशीलता दाम्पत्य, में संयम और सरसता, स्वालम्बन, सेवा की भावना, विश्वबन्धुत्व का सन्देश आदि का अद्‌भुत समन्वय है। गुप्त जी के काव्य में नारी के सांस्कृतिक स्वरूप का अधिक महत्व है। इस प्रकार कवि गुप्त पर अपने पारिवारिक वातावरण और संस्कारों का प्रभाव पड़ा। परिवार में हमेशा नारी के प्रति आदर एवं सम्मान का भाव रहा। इसी कारण बचपन से ही उनके हृदय में नारी के प्रति आदर्श एवं सुकोमल भावना घर कर गई। जो उनके काव्य में अपूर्व नारी चित्रण के रूप में प्रकट हुई ।

सन्दर्भ–सूची :–

1 मैथिलीशरण गुप्त–कवि और भारतीय संस्कृति के आख्याता, 510 : उमाकान्त,पृ० 408

2 साकेत, द्वादश सर्ग : पृ० 302 ।

3 साकेत, दशम सर्ग : पृ० 256 द्य

4 वही, : पृ० 257 ।

5 वही : पृ० 256 द्य

6 वही, अष्टम सर्ग : पृ० 178 ।

7 साकेत, चतुर्थ सर्ग : पृ० 73 ।

8 जयद्रथ–वध, प्रथम सर्ग : पृ० 1 ।

9 साकेत, द्वादश सर्ग : पृ० 314 ।

10 साकेत, पंचम सर्ग : पृ० 103 ।

11 साकेत, दशम सर्ग : पृ० 264 ।

12 वही, अष्टम सर्ग : पृ० 175 ।

13 रंग में भंग : पृ० 21 ।

14 साकेत, सप्तम सर्ग : पृ० 148 ।

15 साकेत, " : पृ० 148 ।

16. साकेत, नवम सर्ग : पृ० 245 ।

17 साकेत – एक अध्ययन : डॉ० नागेन्द्र, पृ० 88 ।

18 साकेत, पंचम सर्ग : पृ० 106 ।

19 (क) साकेत, अष्टम सर्ग : पृ० 156 ।

(ख) भाग–सुहाग पक्ष में थे, अचलबद्ध कक्ष में थे। साकेत, चतुर्थ सर्ग पृ० 72 ।

20 द्वापर : पृ० 32 ।

21 वही : पृ० 33 ।

22 वही : पृ० 42 ।

23 सिद्धराज, प्रथम सर्ग : पृ० 23 ।

24 जयभारत : पृ० 87 ।

25 वही : पृ० 255 ।

26 (क) साकेत–सौरभ : नगीनचन्द सहगल, पृ० 41 ।

(ख) साकेत, प्रथम सर्ग : पृ० 25–26 द्य

27 तिलोत्तमा : पृ० 80 ।

28 वही : पृ० 12 ।

29 चन्द्रहास, तृतीयांक

30 साकेत, प्रथम सर्ग

31 वही, द्वितीय सर्ग

32 साकेत, अष्टम सर्ग

33 गुप्त जी की काव्यकला और साकेत

34 यशोधरा : पृ० 121।

35 चन्द्रहास, चतुर्थांक

36 विष्णुप्रिया

37 वही: पृ० 073

38 साकेत, प्रथम सर्ग

39 साकेत

40 साकेत में काव्य, संस्कृति और दर्शन

41 साकेत, प्रथम सर्ग

42 साकेत–एक अध्ययन

43 साकेत, नवम सर्ग :96 ।